REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 10 | JULY - 2018

# महर्षि अरविन्द के अतिमानव की अवधारणा

Dr. Arti Kumari[1] and Usha Kumari[2]
[1]Associate Professor , Dept. of Philosophy , B.N. College , T.M.B.U. Bhagalpur.
[2] Research Scholar , Dept.-Philosophy , Tilkamanjhi
Bhagalpur University, Bhagalpur.

**Abstract**

महर्षि अरविन्द की अति मानव की अवधारणा मनुष्य को अध्यात्मिक शक्ति से जोड़ने का विनम्र प्रयास है । उनकी मान्यता थी कि लोभ, मोह, मत्सर जैसे दुर्गुणों का परित्याग कर व्यक्ति विकास की नई इवारत लिख सकता है । महर्षि अरविन्द विकासवाद की अवधारणा से तादात्म्य रखते थे जो निरंतर विकास के विचार का अनुमोदन करता है । व्यक्ति नैतिक एवं चारित्रिक उत्थान कर विकास के नये पायदान पर आरूढ हो सकता है । महर्षि अरविन्द के अनुसार मनुष्य में अतिमानव बनने की समस्त संभावनाएँ बीज रूप में मौजूद है। उसे भली–भाँति पुष्पित एवं पल्लवित करने की आवश्यकता है । योग एवं आध्यात्म के द्वारा मनुष्य अपने अंतःकरण में बीज रूप में स्थित अतिमानव के स्वरूप को मूर्त्त आकार प्रदान कर सकता है । अतिमानव का स्वरूप व्यक्ति को ईश्वरत्व से सायुज्ज करने में सहायक हो सकता है ।

**Keyword :**
छठी ज्ञानेन्द्रियाँ, मानसिक शांति, ईसाई मत का परमार्थवाद, समाजवाद, जिजीविषा, अतिमानस, अतिमानव, विचार स्तर, आत्मज्ञान, सर्जनात्मकता।

महर्षि अरविन्द ने मनुष्य को श्रृष्टि की सबसे महत्वपूर्ण रचना की अविधा प्रदान की है। मनुष्य अपरिमित शक्तियों से सम्पन्न है और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के प्रति उसकी जिजीविषा उसे सृष्टि के अन्य जीवों से पृथक कर एक स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करती है। महर्षि अरविन्द ने इससे उपर उठकर मनुष्य को अध्यात्मिकता के समकक्ष लाकर विश्व समुदाय का उसकी उपलब्धियों से साक्षात्कार कराया। जिस प्रकार अध्यात्मिक सत्ता की शक्तियाँ अपरिमित होती हैं, मनुष्य भी अपनी इच्छाशक्ति से दुर्लभ कार्यों को भी क्षण मात्र में संपादित कर सकता है। अध्यात्मिक सत्ता की भाँति उसके अस्तित्व और उसकी क्षमताओं में निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं। उसकी इन्हीं अपरिमित शक्तियों के कारण वह नवीन प्रतिमान गढ़ने की दिशा में प्रवृत होता है। वह अपनी शक्तियों का संचय मात्र नहीं करता बल्कि उनका उपयोग कर नवीन गवेषणायें करता है जो उसके मनुष्यत्व का परिचायक है। वह अपने उर्वर मस्तिष्क के द्वारा नये अनुसंधान करता रहता है और सृष्टि के अनछुये तथ्यों का उदद्याटन भी करता है । वह सदैव अपने अस्तित्व के साथ संधर्ष करता रहता है । जिसकी परिणति नवीन संभावनाओं के रूप में उभरकर सामने आती है। महर्षि अरविन्द का अतिमानव का विचार मनुष्य में रूपायित इन्हीं असीमित संभावनाओं का प्रतिफल है। उनकी यह स्पष्ट मान्यता थी कि मनुष्य जैसा चिंतनशील प्राणी अपने वर्तमान स्वरूप से संतुष्ट नहीं हो सकता। जीवन के सत्य का उद्धाटन करने के प्रति उसका आग्रह एवं उसकी जिजीविषा उसके शांत अंतर्मन में भूचाल पैदा कर देती है और वह उस सत्य का साक्षात्कार करने के लिए अपनी पूरी शक्ति झोंक देता है। अतिमानव का स्वरूप मनुष्य के द्वारा इसी सत्य का साक्षात्कार करना मात्र है तथा अपनी असीमित शक्तियों का

प्रदर्शन भी। मनुष्य का यह स्वरूप उसे परमसत्य के करीब लाकर खड़ा कर देता है। महर्षि अरविन्द ने अतिमानव के स्वरूप का विस्तृत विवेचन अपने विचारों के माध्यम से किया है। अतिमानव की मानव से पृथक सत्ता को स्वीकार करते हुए वह स्पष्ट करते हैं कि अतिमानव राग और द्वेष से मुक्त होता है । मन और इन्द्रियों पर उसका पूर्ण नियंत्रण होता है जिसके कारण वह मनुष्य से पृथक अपनी स्वतंत्र सत्ता कायम कर पाता है। जीवन के प्रति उसका दृष्टिकोण सामान्य मनुष्य से बिल्कुल हटकर होता है । भौतिकता और सांसारिकता उसे रास नहीं आती क्योंकि अपनी शक्तियों से उसे भौतिक जगत की नश्वरता का प्रतिज्ञान हो जाता है । इसलिए स्वयं को उसे परमसत्य से सायुज्ज करने का प्रयास करता है ताकि उसकी सत्ता परमसत्य के आसपास कायम हो सके ।

महर्षि अरविन्द के अतिमानव के विचारों का स्थायी महत्व है। हलांकि मनुष्य को उस ऊँचाई तक पहुँचने के लिए अभी लम्बी दूरी तय करनी है। लेकिन महर्षि अरविन्द का यह दृढ़ विश्वास है कि मनुष्य अपनी शक्तियों का सही दिशा में उपयोग कर उस असाध्य लक्ष्य को हासिल कर सकता है। इसके लिए मनुष्य के व्यक्तित्व में गुणात्मक परिवर्तन अपेक्षित है। यह सत्य है कि मनुष्य में अतिमानव बनने की पूरी संभावनाएँ निहित है । परन्तु महज दिवा स्वप्न से उसकी इच्छाओं को मूर्त्त स्वरूप नहीं प्रदान किया जा सकता है । इस दुर्लभ लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसे कई चुनौतियों का सामना करना होगा । उसे व्यक्तित्व में अपेक्षित परिवर्तन करके स्वयं को अतिमानव के समक्ष लाया जा सकता है । महर्षि अरविन्द के अनुसार यह कार्य दुष्कर है परन्तु असंभव नहीं । अध्यात्म एवं योग के माध्यम से मनुष्य अतिमानव की दिशा में आनेवाली चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना कर स्वयं के लिए नये प्रतिमान कायम कर सकता है और स्वयं उस लक्ष्य को हासिल कर सकता है । यहां पर महर्षि अरविन्द, पतंजलि के योग से तादात्म रखते हुए भिन्न हो जाते हैं जिसे पतंजलि योग सूत्र में इस प्रकार व्यक्ति किया गया हैः–

Sri Aurbindo's Yoga Philosophy is fundamentally Different from that of Patanjali. Patanjali lays stress on the control of Chittaviritti- "Yoga Chittaviritti Nirodhah." 1

महर्षि अरविन्द ने भारतीय चिन्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । उन्होंने सर्वप्रथम घोषणा की कि मानव संसारिक जीवन में भी दैवीशक्ति प्राप्त कर सकता है । वे मानते थे कि मानव भौतिक जीवन व्यतीत करते हुए तथा अन्य मानवों की सेवा करते हुए अपने मानस को "अतिमानस" (Supermind) तथा स्वयं को "अतिमानव" (Superman) में परिवर्तित कर सकता है । महर्षि अरविन्द के शब्दों में–

"Man's greatness is not in what he is but in what he makes possible. His glory is that he is the closed place and sacret workshop of a living. Labour in which supermanhead is made ready by a divine craftsman." 2

शिक्षा द्वारा यह संभव है। आज की परिस्थितियों में जब हम अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति एवं परम्परा को भूलकर भौतिकवादी सभ्यता का अंधा–अनुकरण कर रहे हैं अरविन्द का शिक्षा दर्शन हमें सही दिशा का निर्देश करता है । आज धार्मिक एवं आध्यात्मिक जागृति की नितांत आवश्यकता है ।

श्री बी. आर. तनेजा के शब्दों में –

"श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन लक्ष्य की दृष्टि से श्री अरविन्द का आदर्शवादी उपागम की दृष्टि से यथार्थवादी, क्रिया की दृष्टि से प्रयोजनवादी तथा महात्वाकांक्षा की दृष्टि से मानवतावादी है। हमें इस दृष्टिकोण को शिक्षा में अपनाना चाहिए ।"

श्री अरविन्द के दर्शन का लक्ष्य "उदात्त सत्य का ज्ञान" है जो समग्र जीवन दृष्टि द्वारा प्राप्त होता है । समग्र जीवन दृष्टि मानव के भ्रम में लीन या एकाकर होने पर विकसित होती है । ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण द्वारा मानव "अतिमानव" बन जाता है । अर्थात् वह सत्, रज् व तम् की प्रवृति से उपर उठकर ज्ञानी बन जाता है । महर्षि अरविन्द मनुष्य को Matter से उपर उठने की बात करते हैं। वह कहते हैं कि–

Sri Aurbindo dislikes the idea of being a recluse. He does not subscribe to the view that spirit is different from matter. Spirit and matter are inextricably intertwined with each ether.

He say's,

"Matter shall reveal the spirit's Face." 3

अतिमानव की स्थिति में व्यक्ति शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक दृष्टि से एकाकार हो जाता है तो उसमें दैवीशक्ति का प्रादूर्भाव होता है । यह दैवीशक्ति मनुष्य को नवीन ऊर्जा से संचालित करती है । इन

असीमित शक्तियों का समाहार कर मनुष्य अपने अभिलषित लक्ष्य को प्राप्त करने के प्रति प्राणपन से प्रतिबद्ध होता है । मार्ग में आने वाले समस्त अवरोधों का परिसमन कर वह अपने लिए नवीन संभावनाओं का सृजन करता है जो लक्ष्य प्राप्तिकी दिशा में मील का पत्थर सिद्ध होती है ।

समग्र जीवन दृष्टि हेतु अरविन्द ने योगाभ्यास पर अधिकबल दिया है । योग द्वारा मानसिक शांति एवं संतोष प्राप्त होता है । अरविन्द की दृष्टि में योग का अर्थ जीवन को त्यागना नहीं बल्कि दैवी शक्ति पर विश्वास रखते हुए जीवन की समस्याओं एवं चुनौतियों का दृढ़ता से सामना करना है । योग मनुष्य के अन्तःकरण में विद्यमान कलुषित वासनाओं एवं विचारों का परिष्कार कर उसे विकास के उच्चतम मानदंडों का संस्पर्श कराता है । योग के द्वारा मनुष्य की कुंठाओं एवं विसंगतियों का प्रतिहार संभव है जो दैवीशक्ति से स्वयं को आत्मसात् करने के लिए अपेक्षित है। व्यक्ति के अन्दर घर कर गये अहंकार एवं दृढ़धर्मिता का समूल नाश हो जाता है जिससे उसके मार्ग की समस्त वाधायें स्वतः ही दूर हो जाती है ।

अरविन्द की दृष्टि में योग कठिन आसन व प्राणयाम करना भी नहीं है बल्कि ईश्वर के प्रति निष्काम भाव से आत्मसमर्पण करना तथा मानसिक शिक्षा द्वारा स्वयं को दैवीस्वरूप में परिणत करना है । अरविन्द ने मस्तिष्क की धारणा स्पष्ट करते हुए कहा है कि मस्तिष्क के विचार–स्तर, चित् , मनस, बुद्धि तथा अंर्तज्ञान होते हैं जिनका क्रमशः विकास होता है । महर्षि अरविन्द ने अर्न्तज्ञान को विशेष महत्व दिया है । अर्न्तज्ञान द्वारा ही मानवता प्रगति की वर्तमान दिशा में पहुँची है ।

अरविन्द की मस्तिष्क की धारणा की परिणति "अतिमानस" की कल्पना व उसके अस्तित्व में है। अतिमानस चेतना का उच्च स्तर है तथा दैवी आत्मशक्ति का रूप है। अतिमानस की स्थिति तक शनैः शनैः पहुँचना ही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए । अरविन्द के अनुसार भारतीय प्रतिभा की तीन विशेषताएँ हैं– आत्मज्ञान, सर्जनात्मकता तथा बृद्धिमता । अरविन्द ने देशवासियों में इन्हीं प्राचीन आध्यात्मिक शक्तियों के विकास करने का संदेश देकर भारतीय पुर्नजागरण की आधारशिलाा रखी ।

महर्षि अरविन्द के शब्दों में–

" भारतीय अध्यात्कि ज्ञान जैसी उत्कृष्ट उपलब्धि वगैर उच्चकोटि के अनुशासन के अभाव में संभव नहीं हो सकती जिसमें कि आत्मा व मस्तिष्क की पूर्ण शिक्षा निहित है ।"

श्री अरविन्द के अनुसार "शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य विकासशील आत्मा के सर्वांगीण विकास में सहायक होना तथा उच्च आदर्शों के लिए प्रयोग हेतु सक्षम बनाना है ।"

अरविन्द के विचार महात्मा गाँधी द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के लक्ष्यों से तादात्माय रखते हैं । अरविन्द की धारणा थी कि शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में यह विश्वास जागृत करना है कि वह मानसिक तथा आत्मिक दृष्टि से पूर्णरूपेण सक्षम है । शिक्षा द्वारा व्यक्ति की अंतर्निहित बौद्धिक एवं नैतिक क्षमताओं का स्वच्छंद विकास होना चाहिए । इसलिए वे मस्तिष्क को "छठी ज्ञानेन्द्रियाँ" मानते थे । उन्होंने कहा था कि "मस्तिष्क का उच्चतम सीमा तक पूर्ण प्रशिक्षण होना चाहिए अन्यथा व्यक्ति अपूर्ण एवं एकांगी रह जाएगा । अतः शिक्षा का लक्ष्य मानव व्यक्तित्व के समेकित विकास हेतु अतिमानस का उपयोग करना है ।" अतिमानव के संबंध में नीत्शे ने गहरी छानबीन की है । अतिमानव की अवधारणा नित्शे के दर्शन का केन्द्रीय चिन्तन है। नित्शे (Nietzsche) का चिन्तन उनके अपने समय की वैचारिक एवं सांस्कृतिक यथार्थता के प्रति एक बड़ी व्यापक एवं स्मृत परन्तु कुछ उलझी हुई प्रतिक्रिया है। वह ऐसे दर्शन की सृष्टि करना चाहता है जो मूल्यों का पूर्ण मूल्यांकन कर सके । यूरोपिय संस्कृति के विभिन्न पक्षों की वह आलोचना करते हैं । आलोचना सूक्ष्म तथा मनोवैज्ञानिक है और उसमें मौलिक एकता है । ईसाई मत के परमार्थवाद, समाजवाद, सामाजिक प्रगति की नियतिवादी व्याख्या पर (चाहे वे हेगल प्रदत्त इतिहासवादी हो या डार्विन द्वारा प्रतिपादित विकासवादी) तथा बेंथम और जे.एस. मिल के उपयोगितावाद पर नित्शे कड़ा प्रहार करते हैं । नित्शे का आग्रह पूर्वक कहना है कि युद्ध जीवन का एक पहलू है और आदर्श मनुष्य वही है जो योद्धा है । मानव व्यक्तित्व का विकास ही मानव की क्षमताओं को प्रकट करेगा, यह सिद्धांत नित्शे के दर्शन की आत्मा है। मानव साधन है। पृथ्वी पर अतिमानव के अवतरण का, परन्तु यह अवतरण विकासवाद के अनुसार न होकर मानव के सक्रिय एवं सावधान प्रयत्नों का परिणाम होगा । सहज जीवन और उसके लिए स्वेच्छा से अपनाया हुआ अनुशासन नित्शे के आदर्श व्यक्ति की कसौटी है । व्यक्ति को रूढ़ियों का नहीं श्रेष्ठ पुरूषों का अनुकरण करना चाहिए । अपनी प्रसिद्ध उक्ति "ईश्वर की मृत्यु हो गई" के

द्वारा व मूल्यों में शाश्वतवाद के अन्त का तथा मानव मन में व्याप्त अनावस्था का निर्देश करना चाहते हैं। साथ ही वह यह भी स्पष्ट करना चाहते हैं कि श्रेष्ठ पुरूष ही अब मानव की सबसे बड़ी आशा है ।

अरविन्द व्यक्ति के बौद्धिक विकास के साथ उसका नैतिक एवं धार्मिक विकास भी करना चाहते थे। उनकी धारणा थी कि " मानव की मानसिक प्रवृति, नैतिक प्रवृति पर आधारित है । वौद्धिक शिक्षा, जो नैतिक व भावनात्मक प्रगति से रहित हो, मानव के लिए हानिकारक है। " नैतिक शिक्षा हेतु अरविन्द गुरू की प्राचीन भारतीय परंपरा के पक्षधर थे जिसमें गुरू–शिष्य का मित्र, पथ–प्रदर्शक तथा सहायक हो सकता था । अनुशासन द्वारा ही विद्यार्थियों में अच्छी आदतों का निर्माण हो सकता है । उन्होने मनुष्य को अपने मानवतावादी आदर्शों पर ही चलने के लिए अभिप्रेरित किया । ईश्वरीय गुणों से युक्त होने की चाह रखने की बजाय श्रेष्ठ मनुष्य बनना अधिक श्रेयष्कर है । उनका कहना था कि "मानव तभी मानव बनेगा जब वह केवल पुल बनकर कार्य करते रहें वही मानव श्रेष्ठ है, जो नीचे नहीं उपर की ओर देखता है ।" वह ईश्वर को ईश्वर न कहकर अतिमानव कहा करते थे । ईश्वर के अस्तित्व को ऐसा कहकर उन्होंने चुनौती ही दे डाली । नित्शे मनुष्य को अध्यात्मिक दृष्टि से नहीं, भौतिक दृष्टि से उच्चतर शिखर पर पहुँचा हुआ देखना चाहते थे । उन्होंने सुरा और सुन्दरी में खोये रहने वाले मनुष्यों के प्रति गहरी वितृष्णा जाहिर की ।

विकास प्रक्रिया का प्रमुख चरण मन है । मन के द्वारा ही आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ स्तरों में विभेद हो पाता है । श्री अरविन्द के अनुसार मानसिक सत्ता द्वारा मानव अपनी सत्ता तथा आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ जगत की सत्ता की जानकारी हासिल करता है । 4

श्री अरविन्द अतिमानस को चरम सत्य चेतना कहते हैं । इसका तात्पर्य यह है कि अतिमानस चेतन सत्ता है । ब्रह्माण्ड चित्तसत्ता की ही अभिव्यक्ति है । अतः ब्रह्माण्ड ही चेतना का रूप है । यही कारण है कि सृष्टि में अनेकता का भेद स्पष्ट होता है । इससे मूल सत् खंडित नहीं होता क्योंकि सत् मूल्यतः एक रूप है । अनेकता तथा एकात्म होने के कारण यह अतिमानस चरम सत्य चेतना है । अतिमानस को सृष्टि सर्जनात्मक भाव सत् भाव कहा गया है । 5

मानस से अतिमानस तक पहुँचने की प्रक्रिया एकाएक समाप्त नहीं होती है बल्कि उसमें एक क्रम है , कुछ सीढ़ियाँ है । इसके लिए कुछ क्रम तथा बीच के स्तरों का होना आवश्यक है । मानस तथा अतिमानस के बीच, निम्नलिखित क्रमिक स्तरों को उल्लेख किया गया है– मानस, उच्चतर मानस, प्रदीप्त मानस, अर्न्तदृष्टि व्यापक मानस उसके बाद अतिमानस की प्रक्रिया की जा सकती है । 6

जीव अपने प्रयत्न से मानस के स्तर तक पहुँच चुका है । मानस से अतिमानस की ओर अग्रसर होने की दिशा में वह सतत् प्रयत्नशील है ।

## संदर्भ सूची :

1. Patanjali : Yogasutra, 2
2. Sri Aurbindo : Essays devine and human, The complete works of Sri Aurbindo, vol. 12, 1997, P.160
3. Sri Aurbindo : All India magazine, Pandicherry, October 1998, P.1
4. दार्शनिक अनुगूंज : डॉ0 रवीन्द्र कुमार सिन्हा–विश्व प्रक्रिया की अवधारणा, पृ0सं0– 41
5. वही पृ0सं0–42
6. वहीं पृ0सं0–43

**Usha Kumari**
**Research Scholar , Dept.-Philosophy , Tilkamanjhi Bhagalpur University, Bhagalpur.**